रास्ता इधर से है

रघुवीर सहाय

रास्ता इधर से है

वह एक वाहियात दिन था। सब कुछ शांत था - यहाँ, इस कमरे में जहाँ किसी के चलने की भी आवाज नहीं सुनाई पड़ सकती थी : इतने मोटे गलीचे बिछे थे : दीवारें जहाँ चिकनी, संगमरमर की-सी शांतिमय, तापमान जहाँ स्थिर, शरीर के अनुकूल था और

https://www.hindiadda.com/rasta-idhar-se-hai/

सबसे बड़ी बात, धूल जहाँ नहीं थी : आप चाहें तो मेज पर आस्तीन रख सकते थे। वहाँ नीचे के कमरों की मेजों की तरह नहीं कि उन पर लोग खाने की जूठन पोंछ कर रजिस्टर खोल लेते हैं, पर उस कमरे के बावजूद वह दिन एक वाहियात दिन था।

एक-एक करके चालीस आदमी उस कमरे में आए। चालीस : अलीबाबा : खुल जा सम-सम। हाँ, एक दरवाजा भी उस कमरे में था आने के लिए और वही जाने के लिए भी। एक और दरवाजा था, उसको खोलने से कोई कहीं जा नहीं सकता था - जो जाता उसे छोटी या बड़ी हाजत रफा करके वापस आना पड़ता। पर उस पर कहीं लिखा न था कि यह कहाँ का दरवाजा है। हर बार जब कोई आदमी वापस जाने लगता तो गलती से यही दरवाजा खोलने लगता और हम पाँच आदमी जो उस कमरे में बैठे थे, असली दरवाजे की ओर उँगली उठा कर एक साथ चिल्लाते, "रास्ता इधर से है।"

दोनों दरवाजे बिल्कुल एक-से थे। अगर हम पाँच आदमी दिन-भर भी उस कमरे में बैठे रहते और सचमुच एक न एक हाजत रफा करके उठते रहते तो भी दिन-भर में मिला कर चालीस बार वह दरवाजा खोलते। मगर उस दिन वह चालीस बार खुला। और एक भी आदमी उसके भीतर नहीं गया। उसका आधा खुलना होता कि हम पाँचों वे ही शब्द चिल्ला पड़ते जो ऊपर कहे गए हैं। चमचमाता हुआ कमोड जरा देर को दिखाई देता, फिर चूँ करके दरवाजा बंद हो जाता और उसको खोलनेवाला सिर झुकाए असली दरवाजे की ओर बढ़ जाता।

कोई बात थी कि जब हम पाँचों आदमी अपने-अपने सवाल पूछ चुके होते तो जवाब देनेवाला कमरे से छूट कर जाने की इतनी जल्दी में होता कि वह सबसे पहले सामने पड़नेवाले दरवाजे से निकलना चाहता। पर वह तो वही दरवाजा था जिसमें कमोड दिखाई देता था।

जब कई बार ऐसा ही हो चुका तो हम पाँचों हँसने लगे। एक ने कहा, "क्या कम्पनी ने यह दरवाजा इम्तहान लेने के लिए लगवाया है?" वह शायद सोचता था कि यह भी व्यक्तित्व की परीक्षा का एक अच्छा उपाय है। आदमी अगर नौकरी चाहता है तो कही इतना बदहवास तो नहीं है कि कमरे में आने के बाद भूल जाए कि किस दरवाजे से आया था। दूसरे ने कहा, हा हा हा हा! तीसरे ने कहा, नहीं, लगवाया तो इसलिए नहीं गया था। परन्तु मैं आपका मतलब समझ गया। आगे से हम इस पर भी पाँच नम्बर रख सकते हैं। चौथे ने कहा, मगर नम्बर किसे मिलेंगे? उसी को न जो सही दरवाजे से जाएगा? इस पर मैंने कहा, नहीं, उसे जो पेशाबघर का दरवाजा खोलेगा और जब हम

लोग कहेंगे, नहीं, नहीं, रास्ता इधर से है तो वह कहेगा, मुझे मालूम है। मैं पेशाब करने जा रहा हूँ।

यह बात किसी को पसन्द नहीं आई। उस कमरे में सिर्फ प्रधान प्रबन्धक पेशाब कर सकते थे। यह भी विवादास्पद था कि अगर प्रधान प्रबन्धक, सहायक प्रधान प्रबन्धक और प्रमुख उपसहायक प्रधान प्रबन्धक विचार-विमर्श करने बैठे होते और प्रमुख उपसहायक प्रधान प्रबन्धक को पेशाब लगता तो वह उठ कर बाहर जाते या उसी पेशाबखाने में जाते जो प्रधान प्रबन्धक के लिए निश्चित था। सहायक प्रधान प्रबन्धक शायद इजाजत ले कर चले भी जाते, लेकिन प्रमुख उपसहायक प्रधान प्रबन्धक शायद नहीं जाते। वह बाहर जाते - उतनी दूर जाना उनके नाम जितना ही लम्बा रास्ता तय करने के बराबर होता, पर वह जाते अपने कमरे में, उससे जुड़े हुए अपने पेशाबघर में।

मेरी बात किसी को पसन्द नहीं आई थी। मैं मन-ही-मन निराश हुआ। कोई यह विचार पसन्द करता तो आगे मैं यह शर्त रखता कि पूरे नम्बर उसे नहीं मिलेंगे जो सिर्फ कहेगा कि मैं पेशाब करने जा रहा हूँ बल्कि उसे मिलेंगे जो वहाँ जा कर वाकई पेशाब करेगा।

मैं ऐसा कह पाता तो बाकी चारों इसमें संशोधन कर सकते थे। मसलन एक नम्बर इस बात को बताते कि उसके पेशाब की आवाज सुनाई पड़ी या नहीं और इसका कि उसने बटर भीतर ही बन्द किए या बाहर आ कर और पैजामा चढ़ा कर पेशाब करने पर सब नम्बर काट लेना तय हो सकता था।

इसके बजाय वे बहस इस बात पर करने लगे कि यदि अभी तक हमने यह चीज इम्तहान में नहीं रखी तो बाकी लोगों को इसके नम्बर दे कर हम अन्याय करेंगे। इसके पहले सभी को अंग्रेजी बोलने पर नम्बर दिए गए थे। अंग्रेजी बोलने और पेशाबघर का दरवाजा पहचानने में कोई समतुल्यता नहीं है, इतना न्याय तो हम पंच जानते ही थे।

उस इमारत में हम पाँच बड़े अफसर थे। हम सबके कमरे अलग-अलग थे। सबके लिए दोपहर में अलग खाना परसा जाता था। वह कैंटीन के खाने से कहीं ज्यादा उम्दा होता था। मगर इससे यह निष्कर्ष न जाने किस तरह निकल आया था कि हम सबके लिए पेशाब और पाखाने के कमरे भी अलहदा होने चाहिए जबकि वहाँ हम जो कुछ करते वह उम्दा खाने के बावजूद वही होता जो कैंटी में मोटा खानेवाले करते। मुझे सूझा कि अगर कभी कोई आन्दोलन इस इमारत में समता के लिए हो तो वह सबको एक-सा खाना देने की माँग पूरी हो जाने पर भी सफल न होगा। ऐसे सभी आन्दोलन क्यों

बेकार हो जाते हैं? इस पर सोचते-सोचते मैं इस नतीजे पर आया कि इसलिए कि वे सबके लिए एक पेशाबघर की माँग नहीं करते।

हम लोग अपनी फाउंटेनपेन बनाने की कम्पनी में सेलमैनों की नियुक्ति के लिए आदमी छाँट रहे थे। उस समय हमारे सामने एक लड़का बैठा हुआ था जिससे पूछा जा रहा था कि वह यह नौकरी क्यों करना चाहता है। बाकी सवाल जो सबसे पूछे जाते, वे पूछे जा चुके थे, जैसे - तुम्हारे शौक क्या हैं? हर सवाल पर उम्मीदवार इस तरह अपना व्यक्तित्व निचोड़ कर रख देता जैसे इसी के ठीक उत्तर पर उसे नौकरी मिल जाएगी। ऐसा कुछ था नहीं। नौकरी मिलना जिस बात पर निर्भर था उसे कोई नहीं जानता था। लिखित इम्तहान में पचास से कम नम्बर जो लोग लाए थे उनके लिए तो एक यही सवाल काफी था - तुम यह नौकरी क्यों करना चाहते हो? इसके जवाब में जिसने कोई ऊँचा कारण बताया वह गया। मसलन, मैं कलम बेच कर ज्ञान का प्रसार करना चाहता हूँ। जिसने यह कहा कि इसलिए कि मुझे नौकरी की जरुरत है, उससे अगला सवाल यह होता था कि तो फिर यही क्यों? और उसके पास कोई साधारण जवाब होता ही नहीं था, वह हमेशा कोई बड़ा कारण बताना चाहता था। और हम जानते थे कि इसी से वह मारा जाएगा। हम यह भी जानते थे कि किसी की हिम्मत यह कहने की न पड़ेगी कि वह यह नौकरी इसलिए चाहता है कि वह खाली है - वह भी और नौकरी भी - जबकि असलियत एकदम यही थी और इससे बढ़िया कोई कारण किसी के पास नौकरी के लिए साक्षात्कार देने का हो ही नहीं सकता था।

लड़के ने जवाब में कहा कि वह असल में तो वकालत करना चाहता था पर वकालत उससे चलेगी नहीं। यह कह कर उसने अपने को फँसा लिया। उससे फौरन पूछा गया कि जब वह मुवक्किल की पैरवी नहीं कर सकता तो कलम की कैसे करेगा? इस पर वह घबराहट के मारे काँपने लगा और उसने कहा - किसी तरह कर लूँगा। मैंने एक क्षण को कल्पना की कि लड़का मजमे में खड़ा कह रहा है - भारत कम्पनी का फाउंटेनपेन खरीदिएगा...यह हमेशा सत्य लिखता है...।

इसके बाद एक और लड़का आया। इसके खानदान में दुकानदारी थी। इसने कुर्सी पर बैठ कर ऐसे देखा जैसे सेलमैन हो ले तो कल वह इस कम्पनी को ही खरीद लेगा। प्रधान प्रबन्धक अपने लिए इतना बड़ा खतरा देख कर भी उसी लड़के से सबसे ज्यादा खुश हुए। उन्होंने उससे उसके पिता का हाल-चाल पूछा और उसे चाय पिलाई। मुझे तो शक हुआ कि शायद वह उसे अपने पेशाबघर के इस्तेमाल का भी न्योता देनेवाले हैं, पर नहीं दिया।

एक-एक करके कई लोग और आए। सभी विश्वविद्यालय में साहित्य, विज्ञान, राजनीति, अर्थशास्त्र, इतिहास या कानून - इनमें से कुछ-न-कुछ पढ़ चुके थे। नौकरी की शर्त ही यही थी। कुछ शायद अपने सबसे बढ़िया कपड़े पहन कर आए थे। पर कपड़े नहीं जनाब, मैं बाकी चारों निर्णायकों से कहना चाहता था, जूते देखिए, जूते। उन्हीं से आदमी के असली चरित्र का पता चलता है। एक के जूते बताते थे कि वह बहुत गरीब घर का है, हालाँकि उन पर पॉलिश थी। एक के जूते बताते थे कि उसके पास कई जोड़े जूते और भी हैं - और कपड़े वह बिल्कुल मामूली पहने था - देखिए न, जितने खानदानी पैसेवाले होते हैं अक्सर मामूली कपड़े पहनना चाहते हैं... मगर उनके जूते... ।

दो एक ने नौकरी क्यों करना चाहते हैं, इसका कारण बताया कि उन्हें अपने बूढ़े बाप का हाथ बँटाना है। तीनों लड़कों ने कहा कि सीधी बात यह है कि हमें भी तो कोई रोजी चाहिए, नहीं तो भाई के मत्थे कब तक खाते रहेंगे। ये सब कारण काफी नहीं थे। इनसे यह सिद्ध नहीं होता था कि ये लोग कमाल दिखाएँगे।

एक ने तो कोई कारण नहीं बताया। वह उठ कर खड़ा हो गया और कहने लगा, सर, मुझे नौकरी दे दीजिए, आपकी बड़ी मेहरबानी होगी, सर!

सबसे विशेष बात जो हमारे प्रधान प्रबंधक ने बाद में बताई, यह थी कि कोई भी उम्मीदवार यह नहीं बता सका कि पश्चिम जर्मनी में जो टेलीविजन टावर है वह कितना ऊँचा है। प्रधान प्रबन्धक इसी वर्ष उस पर चढ़ कर चारों तरफ देख आए थे और उसके ऊपर बने रेस्तराँ की विचित्रताएँ हम लोगों को बताया करते थे। हम लोग शैक, जूते, कपड़े, अंग्रेजी इन सभी की जाँच करते रहे। और एक स्वर में 'रास्ता इधर से है' बताते रहे। शाम होने को आई। पास उम्मीदवारों की सूची बनाने का वक्त आ गया। प्रधान प्रबंधक के सचिव ने सबके नम्बर सामने ला कर रख दिए।

सूची में नम्बर जोड़ने पर मालूम हुआ कि हम लोग किसी को नहीं ले सकते। सत्तर से ऊपर नम्बर लानेवाले को ही लेना तय हुआ था। इतने किसी के नहीं थे। इसलिए हम लोगों ने फिर से विज्ञापन देने का फैसला किया। आज के अनुभव से सीख ले कर इस बार हम लोगों ने विज्ञापन में एक शर्त रख दी कि जो लोग कहीं नौकरी न कर रहे हों वे अर्जी न दें। इसके कई फायदे हुए। एक तो यही कि हम लोगों को 'रास्ता इधर से है' नहीं कहना पड़ा। उम्मीदवार आते और आते ही अपने शऊर और सलीके से जता देते कि उन्हें यह बात मालूम है कि प्रधान प्रबन्धक के कमरे से जुड़ा हुआ एक पेशाबघर है। हाँ, इससे सारा कार्यक्रम नीरस जरूर हो गया था। अन्त में हम लोगों ने उस

आदमी को चुना जिसने साक्षात्कार के बीच में एकाएक पूछा था - सर, मैं जरा बाहर पेशाब कर आऊँ, सर!